BIHAR SHODH SAMAAGAM
Multidisciplinary, Multi-Lingual, Peer Reviewed Open Access Journal
issn : 3048-6971
Vol. 3, Issue 2, April-June, 2025
Available online : https://www.biharshodhsamaagam.com/

हिन्दी कथा साहित्य में स्त्री- पुरुष संबंधों के बदलते समीकरण एवं कृष्णा सोबती

चन्दन कुमार
शोध छात्र, हिन्दी विभाग
भूपेन्द्र नारायण मंडल विश्वविद्यालय, मधेपुरा, बिहार

सार

बदलते सामाजिक परिवेश ने जिन जीवन मूल्यों को उत्पन्न किया है, वे मानवीय संबंधों को कई स्तरों पर प्रभावित कर रहे हैं। मानवीय संबंधों के स्वरूप में आधुनिक युग में आमूल परिवर्तन आया है। राजेंद्र यादव के अनुसार, "संबंधों के क्षेत्र में सबसे अधिक भीषण संक्रांतियों से गुजरना पड़ा है नारी और पुरुष के आपसी संबंधों को।"[1] औद्योगीकरण, नगरीकरण एवं भूमण्डलीकरण ने जिस सामाजिक व्यवस्था को निर्मित किया है, उसने स्त्री और पुरुष के परंपरागत संबंधों के समीकरण को बदल दिया है।

विस्तार

स्त्री एवं पुरुष के संबंधों में परिर्तन के पीछे एक प्रमुख कारण है नारी का अपनी अस्मिता के प्रति जागरूक होना पुनर्जागरण, देश के स्वाधीनता संग्राम एवं स्वातंत्र्योत्तर भारत में स्त्रियों के लिए बनाये गये अनेक प्रभावी कानूनों एवं सुधार कार्यक्रमों ने स्त्रियों को न केवल आत्मनिर्भर बनाया, बल्कि उनके अंदर आत्मविश्वास भी उत्पन्न किया। समाज में आ रहे इस परितर्वन को साहित्य ने भी परिलक्षित किया है। हिन्दी साहित्य के आधुनिक युग पर यदि हम दृष्टिपात करें तो पाएँगे कि स्त्री एवं पुरुष के संबंधों के विभिन्न पहलुओं को रचनाकारों ने अपनी-अपनी तरह से स्थापित करने का प्रयास किया है।

प्रेमचंद युग: बीसवीं सदी के हिन्दी कथा-साहित्य के क्षेत्र में प्रेमचंद का अवतरण विभिन्न सामाजिक, पारिवारिक और आर्थिक समस्याओं को पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत करता है। इस दौर में भारतीय समाज में अनेक प्रकार की उथल-पुथल मची हुई थी। संयुक्त परिवार टूट रहे थे और एकल परिवार अस्तित्व में आने लगे थे। दहेज प्रथा, विधवा समस्या, बाल विवाह एवं वेश्याओं की समस्या ने नारी की स्थिति को अत्यंत सोचनीय बना दिया था। समाज में मौजूद स्त्री-पुरुष संबंधों में बदलाव की जरूरत थी। प्रेमचंद की नारी - विषयक दृष्टि जटिल है। प्रगतिशील होने के साथ-साथ वे परंपरावादी भी हैं। प्रेमचंद का युग समाज-सुधार का युग था। परंपरावादी सोच यह मानती थी कि शिक्षित स्त्री भी घर का काम-काज ही देखेगी, घर का हिसाब-किताब रखेगी, नौकरों पर नियंत्रण रखेगी। दूसरी तरफ प्रगतिशील दृष्टि यह जानना चाहती है कि स्त्री और पुरुष को समाज द्वारा प्रदत्त भूमिका में कोई बदलाव संभव है या नहीं। प्रेमचंद के यहाँ एक समाज सुधारक की चेतना मौजूद है। अपने पहले उपन्यास 'सेवासदन' (1917) में ही वे नारी के साथ खड़े दिखते हैं। स्त्री को वेश्या बनाने के लिए वे पुरुष समाज को उत्तरदायी मानते हैं। 'निर्मला' में दहेज प्रथा की वजह से उत्पन्न अनमेल विवाह और उससे उपजी दाम्पत्य जीवन की विभिन्न समस्याओं पर प्रकाश डाला गया है। एक ऐसी स्त्री के मनोभावों को समझने का प्रयास किया गया है जिसका विवाह उसके पिता के उम्र के व्यक्ति से हो गया है। निर्मला अपने पति के साथ पूर्ण तादात्म्य बिठाने में असफल रहती है एवं उसका दाम्पत्य जीवन छिन्न-भिन्न हो जाता है। प्रेमचंद की 'कुसुम' कहानी दहेज प्रथा पर आधारित है। कुसुम का पति अपेक्षित दहेज न मिलने की वजह से उससे खिंचा-खिंचा रहता है। जब तक कुसुम को पति की उपेक्षा का कारण नहीं मालूम, वह उसे मनाने के प्रयत्न करती परंतु जब उसे कारण का पता चलता है, वह पति से अलग रहने का निर्णय लेती है। प्रेमचंद ने उसके स्वाभिमान की रक्षा की है।

दाम्पत्य संबंधों में पारस्परिक ईमानदारी एवं सहिष्णुता को प्रेमचंद अत्यावश्यक मानते हैं। 'आभूषण' नामक कहानी में वे बाह्य सौंदर्य की तुलना में आंतरिक गुणों की महत्ता को स्थापित करते हैं। 'सोहाग का शव' एवं 'अंतिम शांति' की नायिकाएँ भी पति के दुर्व्यवहार को सहन नहीं करती। 'खुचर' कहानी में एक स्त्री के प्रजातांत्रिक के प्रश्न

@2025 Bihar Shodh Samaagam

को उठाया गया है, जिसका पति उसके हर काम में दखलअंदाजी करता है। लेकिन इसके बावजूद प्रेमचंद का दृष्टिकोण परंपरावादी है। 'गोदान' में वे मेहता के मुख से कहलवाते हैं कि यदि स्त्री में पुरुष के गुण आ जाएँ, तो वह अनुचित स्थिति होगी, जबकि पुरुष में स्त्री के गुण आ जाएँ, तो वह देवता बन जाएगा। त्याग, तपस्या जैसे गुणों का वे स्त्री के लिए आवश्यक मानते हैं, जबकि पुरुषों से उनकी ऐसी कोई अपेक्षा नहीं। प्रेमचंद मालती के निंदक इसलिए हैं क्योकि वह शिक्षित है, पुरुषों से बेहिचक बातचीत करती है। गोविंदी चूकि घरेलू स्त्री है, इसलिए उसकी महानता की वे चर्चा करते हैं। प्रायः किसी भी शिक्षित स्त्री का अच्छा चित्रण प्रेमचंद के यहाँ नहीं है। यही वजह है कि मालती को भी अंत में वे घरेलू बना देते हैं।

स्त्री-संबंधी कुछ भ्रम, जैसे कि उच्च शिक्षित स्त्री पाश्चात्य सभ्यता की अनुकरण करेगी एवं पति के साथ तालमेल नहीं बिठा पाएगी, की वजह से प्रेमचंद के कई स्त्री चरित्र निर्जीव हो गए हैं। लेकिन प्रेमचंद ने अपने आदर्शों के विपरीत स्त्री चरित्रों की भी रचना की है। अपनी कई रचनाओं जैसे 'जुलूस', एवं 'समरयात्रा' जैसी कहानियों एवं 'कर्मभूमि जैसे उपन्यासों में वे स्त्री चरित्रों को स्वाधीनता संग्राम में हिस्सा लेते दिखाते हैं। हँसराज रहबर के अनुसार, "प्रेमचंद जीवन पर्यन्त स्त्री-पुरुष के संबंध और विवाह जैसी समस्या का हल ढूँढते रहे। कुछ व्यक्तिगत ढंग से और कुछ आदर्शवादी व गांधीवादी ढंग से, उन्होंने इसका हल सोचा भी लेकिन वे किसी नतीजे पर पहुंच न सके।"[2]

प्रेमचंद की रचनाओं में स्त्री-पुरुष संबंध की विभिन्न स्थितियों एवं उनसे जुड़े प्रश्नों को उठाया गया है। अपनी रचनाओं द्वारा वे इन संबंधों के लिए नैतिकता, त्याग एवं बलिदान जैसे मापदण्ड स्थापित करते हैं जो कि स्त्री एवं दोनों के लिए ही मान्य हों। पुरुष, प्रेमचंद के ही समकालीन जयशंकर प्रसाद जो कि छायावादी कवि थे, अपने कथा - साहित्य में भी अपने कवि रूप से प्रभावित रहे हैं। अपनी रचनाओं में स्त्री-पुरुष संबंधों का चित्रण उन्होंने आदर्शवादी रूप में किया है। प्रसाद के नारी चरित्रों का चित्रण उदात्तता के धरातल पर हुआ है। "नारी के व्यक्तित्व में त्याग-भाव, क्षमाशीलता, भावुकता, मादकता तथा सुंदरता का संगम है जो इनके लगभग सभी नारी पात्रों में ललित होता है ।"[3] प्रसाद के पुरुष चरित्र भी दृढ़निश्चयी, वीर एवं तेजस्वी हैं, जो कि नारी के सम्पर्क में आकर अत्यंत संवेदनशील बन जाते हैं। स्त्री-पुरुष संबंधों में प्रसाद के नारी पात्र पुरुष से उच्चतर भूमि पर खड़े नजर आते हैं। चाहे वह 'चंद्रगुप्त' नाटक की कार्नेलिया हो या फिर 'पुरस्कार' कहानी की मधुलिका, इनके लिए इनके स्वयं के अस्तित्व का भी उतना ही महत्व है, जितना पुरुष के अस्तित्व का प्रसाद के यहाँ, पारस्परिक सहयोग दाम्पत्य संबंधों की आधारभूमि है। 'सहयोग' नामक कहानी में उन्होंने दिखलाया है कि किस प्रकार पारस्परिक असहयोग दाम्पत्य संबंधों को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करता है। स्त्री-पुरुष संबंध यहाँ उन्मुक् धरातल पर नहीं है, बल्कि गृहस्थी की डोर में बँधे दिखाई देते हैं। 'आंधी' नामक कहानी में उन्होंने उन्मुक्त जीवन के ऊपर गृहस्थ जीवन की श्रेष्ठता प्रतिपादित की है। अतः प्रसाद के यहाँ भी स्त्री-पुरुष संबंध मर्यादा की डोर में बँधे दिखते हैं।

प्रेमचंदोत्तर युग : जैनेंद्र को व्यष्टि - बोध का रचनाकार माना जाता है। इनके कथा - साहित्य में सामाजिक यथार्थ की बजाय व्यक्ति मन के यथार्थ को प्रधानता दी गई है। जैनेंद्र के यहाँ चरित्रों की प्रतिष्ठा आदर्शवाद के धरातल पर नहीं हुई है, बल्कि उनके पात्र साधारण व्यक्ति जिनमें राग-विराग, द्वेष - प्रेम इत्यादि सभी गुण-अवगुण मौजूद हैं। जैनेंद्र ने स्त्री और पुरुष को एक दूसरे का पूरक माना है, "नितान्त स्त्री और नितांत पुरुष व्यक्तित्व पाता ही नहीं।"[4] जैनेन्द्र ने सामाजिक रूढियों में कैद नारी को प्रतिरोध का साहस दिया और उसकी इयत्ता को अत्यंत महत्त्वपूर्ण माना स्त्री-पुरुष संबंधों में स्त्री के दोहरे दर्जे को यथार्थ रूप से दिखलाते हुए जैनेंद्र किसी भी प्रकार के समाधान का प्रयास नहीं करते हैं। यदि 'सुनीता' और 'त्यागपत्र' के नारी पात्र, सामाजिक मान्याताओं का निषेध करते हैं, तो दूसरी तरफ 'पत्नी' कहानी में समाज द्वारा स्वीकृत भूमिका का एक स्त्री द्वारा निर्वाहन उभर कर आया है। स्त्री एवं पुरुष के टकराव और परिणामस्वरूप टूट रहे परिवार एवं समाज का चित्रण जैनेंद्र की रचनाओं का मुख्य विषय रहा। जैनेंद्र के लिए प्रेम एक वैयक्तिक मूल्य है। अपनी रचनाओं में उन्होंने स्त्री और पुरुष के संबंधों का चित्रण इसी वैयक्तिक मूल्य के आधार पर किया है।

अज्ञेय वैयक्तिक मूल्यों के रचनाकार है। व्यक्ति का स्वतंत्र विकास और उसके व्यक्तित्व की उन्नति को वे समाज के विकास के लिए भी आवश्यक मानते हैं। उनके अनुसार, "व्यक्ति को नैतिक निर्णय की क्षमता से सम्पन्न करके ही अंततः समाज का नैतिक धरातल ऊँचा किया जा सकता है।"[5] स्त्री-पुरुष संबंधों की विविध स्थितियों का चित्रण अज्ञेय के यहाँ मिलता है। अज्ञेय के नारी पात्र, संबंधों के स्तर पर, पुरुषों को बराबरी करते नहीं दिख पड़ते नारी पात्र पुरुष पात्र के लिए अपने स्व का उत्सर्ग करते दिखाई पड़ते हैं । 'शेखर: एक जीवन' की शशि हो या फिर 'नदी के द्वीप' की रेखा, इनकी सार्थकता शेखर या भुवन के लिए अपने आपको मिटा देने में है। स्त्री एवं पुरुष संबंधों के चित्रण के लिए अज्ञेय ने मनोविज्ञान एवं बैद्धिकता का सहारा लिया है।

यशपाल प्रगतिवादी विचारधारा के रचनाकार हैं। एक शोषणहीन समाज की रचना का उद्देश्य उनके साहित्य का मुख्य विषय रहा है। स्त्री-पुरुष संबंधों में एक वर्जनाहीन उन्मुक्त दृष्टि यशपाल की विशेषता है। "एक ओर यदि आर्यसमाजी जीवनदर्शन के परिणामस्वरूप वे अकारण संयम की आत्मघाती प्रवृत्ति की तीखी आलोचना करते हैं तो दूसरी ओर प्रेम की शाश्वत और रोमानी अवधारणा का तिरस्कार करते हैं।"[6] यशपाल के यहाँ काम प्रसंगों को सामाजिक अंतर्विरोध से जोड़कर देखा गया है, उदाहरणार्थ, “तुमने क्यों कहा था मैं सुंदर हूँ !"[7] जैसी कहानियाँ और 'क्यों फँसें' तथा 'दादा कॉमरेड' जैसे उपन्यास यशपाल एक ऐसी समाजवादी व्यवस्था चाहते हैं, जहाँ स्त्री को पुरुष के समान अधिकार प्राप्त हो सके। डॉ. त्रिभुवन सिंह के अनुसार, "यशपाल की दृष्टि में तो नारी वह रूमाल है जिससे जितने आदमी अपना मुँह पोंछ सकते हैं। उससे कालिख छूटेगा ही लगेगा नहीं। स्त्री एक नहीं अनेक पुरुषों के साथ रमण करने पर भी पवित्र रह सकती है यदि उसका मन पवित्र है ।"[8] 'झूठा सच' में डॉ. प्राणनाथ द्वारा तारा को अपनाया जाना इसी दृष्टिकोण का परिचायक है।

स्वातंत्र्योत्तर युग : स्वातंत्र्योत्तर रचनाकारों ने परंपरागत जीवन मूल्यों को पूरी तरफ से नकारा तो नहीं है, परंतु उनका आग्रह उन नवीन जीवन मूल्यों की तरह है जो व्यक्ति- स्वातंत्र्य को प्रतिष्ठा देते हैं। इनके यहाँ सामाजिक रूढ़िवादिता का विरोध है तथा नये जीवन-मूल्यों को अर्जित करने का प्रयास भी है।

निर्मल वर्मा के स्त्री-पुरुष पात्रों को नैतिक या अनैतिक का द्वंद्व नहीं सताता। 'परिन्दे, कहानी की लतिका यदि अपने प्रथम प्रेम की स्मृति को भुलाना नहीं चाहती, तो वहीं 'वे दिन' की रायना आये दिन पुरुष बदलती रहती है एवं उसे इसका कोई पछतावा भी नहीं। लेकिन स्त्री, यहाँ स्वयं को पुरुष के लिए दाँव पर नहीं लगाती।

मोहन राकेश के यहाँ पारम्परिक मूल्यों की टूटन अभिव्यक्त हुई है। 'न आने वाला कल' उपन्यास की शारदा नवीन जीवन दृष्टि से संपृक्त है। पति के मारने पर वह उसका विरोध करती हुई कहती है “एक औरत सब कुछ सह सकती है जी, पर मार खाना कभी बर्दाश्त नहीं कर सकती। हम आजकल की औरतें हैं, उस जमाने की नहीं जब मर्द लोग चादर डालकर उन्हें पीट लिया करते थे। उस जमाने में तो किसी औरत की दूसरी शादी हो ही नहीं सकती थी पर आजकल तो औरतें भी।”[9] मोहन राकेश ने यह भी दिखाया है कि किस प्रकार से आर्थिक स्थिति स्त्री और पुरुष के संबंधों को प्रभावित करती है। 'सुहागिनें, कहानी में पति एवं पत्नी के मध्य की दूरी बढ़ती चली जाती है, आर्थिक समस्याओं को दूर करने के प्रयास में।

स्वातंत्र्योत्तर कथा लेखिकाओं ने अपने कथा साहित्य में पुरुष रचनाकारों द्वारा प्रस्तुत नारी की छवि को खंडित कर उसे उसकी संपूर्णता में उकेरने का प्रयास किया। उस दौर की लेखिकाओं में मन्नू भण्डारी, उषा प्रियंवदा एवं कृष्णा सोबती उल्लेखनीय हैं। इनकी रचनाओं में प्रस्तुत नारी अपने अस्तित्व की रक्षा हेतु प्रयत्नरत है, पारंपरिक सामाजिक रूढ़ियों का विरोध करती है, एवं स्त्री पुरुष संबंध में समानता की माँग रखती है। मन्नू भण्डारी की 'ऊँचाई' कहानी की नायिका दाम्पत्य संबंध में शारीरिक पवित्रता मुददे को महत्वपूर्ण नहीं मानती। उसके लिए नैतिकता एवं अनैतिकता का प्रश्न परिस्थिति के सापेक्ष है। अपने पूर्व - प्रेमी से संबंध स्थापित कर उसे कोई ग्लानि नहीं होती। उसके लिए दाम्पत्य संबंध, "इतना ज्यादा पवित्र है कि सारे संसार की अपवित्रता भी इसमें आकर पवित्र हो जाती है।"[10] मन्नू भण्डारी एवं उषा प्रियंवदा के ही दौर में कृष्णा सोबती भी आती है। कृष्णा सोबती के लिए कहा जाता है कि इन्होंन

स्त्री लेखन को संपूर्ण लेखन में तब्दील किया। कृष्णा सोबती की रचनाओं में पंजाब का समाज, सामाजिक सबंध एवं परंपरागत संस्कारबद्ध स्त्री का अपने अस्तित्व की रक्षा हेतु संघर्ष उभर कर आता है। कृष्णा सोबती के यहाँ स्त्री-पुरुष संबंधों को नैतिकता का मुलम्मा चढ़ा कर प्रस्तुत नहीं किया गया है। सोबती के नारी पात्रों में खुद को लेकर कहीं कोई हीन भावना नहीं है। वे आत्मपीड़क नहीं, बल्कि अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करने का माद्दा रखते हैं। सोबती के नारी पात्र नवीन चेतना से संपृक्त है, अतः स्त्री-पुरुष संबंधों के अंतर्गत परंपरागत दृष्टि का विरोध करते हुए समानता जैसे नवीन मूल्य की प्राप्ति का प्रयास करते हैं।

(i) पति-पत्नी सम्बंध : स्त्री-पुरुष संबंधों में से प्रमुख है पति पत्नी संबंध। नवीन जीवन-मूल्यों ने पति - पत्नी के परंपरागत संबंधों के उस स्वरूप को परिवर्तित किया है, जिसमें पत्नी की कोई स्वतंत्र इच्छा या निर्णय मान्य नहीं था। कृष्णा सोबती के कथा साहित्य में पति - पत्नी संबंधों की विभिन्न स्थितियों का चित्रण मिलता है। 'डार से बिछुड़ी' में पाशो का विवाह उसके पिता की उम्र के दिवान जी से होता है। पाशो कोई प्रतिरोध नहीं करती इस संबंध को लेकर, सिवाय एक हल्की सी आशंका के, "जी धक् धक् करने लगा। जिनकी बैठक में तो किसी के बेटे से नहीं दीखते थे। पका पका चेहरा... रात-भर टिकी थी, वह उम्र का एक लंबा अंतराल होने के बावजूद दोनों का अल्पकालिक दाम्पत्य जीवन सुखद बीतता है। पाशो लेकिन स्वयं को दिवानजी की बराबरी में नहीं रखती, बल्कि स्वयं को उनका चाकर मानती है। पाशो की माँ और शेखजी का दाम्पत्य जीवन भी सुखपूर्वक व्यतीत हो रहा है, हालांकि माँ को इस बात की ग्लानि है, कि एक विधवा होने के बावजूद भी उसने अंतर्जातीय विवाह, घरवालों को नाराज करके किया है। 'मित्रो मरजानी' में पति-पत्नी के चार युग्म मौजूद हैं। गुरूदास धनवंती तथा बनवारीलाल और सुहागवंती का जीवन परम्परागत दाम्पत्य संबंधों को निरूपित करता है, जिसमें पति घर का कर्ता-धर्ता होता है, और पत्नी उसकी अनुगामिनी लेकिन यहाँ ध्यान देने योग्य बात यह है कि सोबती ने अकारण पुरुष पात्रों को क्रोधी या क्रूर नहीं बनाया है, प्रायः पुरुष पात्र सहिष्णु ही हैं। सरदारीलाल एवं सुमित्रावंती का दाम्पत्य जीवन परंपरागत संबंधों से हट कर है, इसकी वजह है मित्रो का तथाकथित परंपरागत नारी के प्रतिमान में फिट न बैठना अपनी शारीरिक जरूरतों का बेबाकी से खुलासा करने वाली मित्रो, सरदारीलाल की शारीरिक असमर्थता को ताने ही नहीं देती, बल्कि गाहे-बगाहे पर पुरूष के संसर्ग की कल्पना भी किया करती है। अपने रूप और यौवन पर उसे गर्व है, "... जब तक मित्रो के पास यह इलाही ताकत है मित्रो मरती नहीं।"[11] मित्रो पति के साथ बरबरी का संबंध चाहती है। सरदारीलाल से झगड़ा होने पर धनवंती मित्रो को समझाती है, "समित्रावती, इसे जिद चढ़ी है तो तू ही आंख नीची कर ले। बेटी, मर्द मालिक का सामना हम बेचारियों को क्या सोहे ? बहू ने बिफर कर और सिर ऊँचा कर लिया और पहले की-सी ढिठाई से सामना किए रही।"[12]

@2025 Bihar Shodh Samaagam

संदर्भ

1. राजेन्द्र यादव, एक दुनिया समानांतर अक्षर प्रकाशन, 1980, पृ. 32
2. हंसराज रहबर, प्रेमचंद : जीवन, कला, कृतित्व, आत्माराम एण्ड संस, दिल्ली, 1959, पृ. 241
3. इंद्रनाथ मदान (संपादित) य हिंदी कहानी: पहचान और परख, लिपि प्रकाशन, दिल्ली, 1975, पृ. 12
4. सुनंत कौर, समकालीन हिंदी कहानी: स्त्री-पुरुष संबंध, अभिव्यंजना प्रकाशन, दिल्ली, 1991, पृ. 42-43
5. रामस्वरूप चतुर्वेदी, अज्ञेय और आधुनिक रचना की समस्या, भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली, 1968, पृ. 167
6. मधुरेश, हिंदी कहानी का विकास, सुमित प्रकाशन, नई दिल्ली, 1994, पृ. 50
7. डॉ. त्रिभुवन सिंह, उपन्यास में यथार्थवाद, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, बनारस, 1955, पृ. 113
8. मोहन राकेश, न आने वाला कल, राजपाल एण्ड सन्ज, दिल्ली, 1984, पृ. 180
9. मन्नू भण्डारी, मेरी प्रिय कहानियाँ, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली, 1986, पृ. 138
10. कृष्णा सोबती, डार से बिछुड़ी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2005, पृ.44
11. कृष्णा सोबती, मित्रो मरजानी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2007, पृ. 19 13. वही, पृ. 12 वहीं पृष्ठ 12